अनुसंधान परिकल्पना के प्रकार
(Types of Research Hypotheses)

वैज्ञानिक अनुसंधान कार्यों में परिकल्पना बनाने के सम्बन्ध में पीछे की गई चर्चा से स्पष्ट हो जाता है कि अनुसंधान परिकल्पना का निर्माण करना निःसन्देह एक बौद्धिक व तार्किक क्रिया है। क्योंकि परिकल्पना बनाने के उपरान्त अनुसंधानकर्त्ता के समस्त प्रयास उस परिकल्पना का परीक्षण करके उसे स्वीकार या अस्वीकार करने की दिशा में केन्द्रित हो जाते हैं इसलिए अनुसंधानकर्ता के द्वारा परिकल्पना बनाते समय उसकी प्रकृति तथा स्वरूप पर भी सम्यक ध्यान देना अत्यन्त आवश्यक होता है। वस्तुतः अनुसंधान परिकल्पनाओं को उनकी प्रकृति तथा स्वरूप के आधार पर कई तरह से वर्गीकृत किया जा सकता है। परिकल्पनाओं के कुछ वर्गीकरण आगे प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

1. प्रथम वर्गीकरण
   - (i) अन्तर की परिकल्पना (Hypothesis of Difference)
   - (ii) सह-सम्बन्ध की परिकल्पना (Hypothesis of Co-relationship)
2. द्वितीय वर्गीकरण
   - (i) दिशापरक परिकल्पना (Directional Hypothesis)
   - (ii) दिशाविहीन परिकल्पना (Non-Directional Hypothesis)
   - (iii) शून्य परिकल्पना (Null Hypothesis)
3. तृतीय वर्गीकरण
   - (i) सकारात्मक परिकल्पना (Positive Hypothesis)
   - (ii) नकारात्मक परिकल्पना (Negative Hypothesis)
4. चतुर्थ वर्गीकरण
   - (i) पूर्व-कथित परिकल्पना (Pre-diction Hypothesis)

14:11

(ii) उत्तर कथित परिकल्पना (Post-diction Hypothesis)
(iii) वर्णित परिकल्पना (Des-cription Hypothesis)

5. पंचम वर्गीकरण
(i) अनुसंधान परिकल्पना (Research Hypothesis)
(ii) सांख्यिकीय परिकल्पना (Statistical Hypothesis)
(a) शून्य परिकल्पना (Null Hypothesis)
(b) वैकल्पिक परिकल्पना (Alternative Hypothesis)

अन्तर की परिकल्पना से तात्पर्य उस परिकल्पना से होता है जो दो या दो से अधिक समूहों के बीच अन्तर से सम्बन्धित होती है जबकि सह-सम्बन्ध की परिकल्पना दो या, दो से अधिक चरों के बीच सह-सम्बन्ध को इंगित करती है। जैसे प्राथमिक स्तर के छात्र एवं छात्राओं की शैक्षिक सम्प्राप्ति में अन्तर है, यह अंतर की परिकल्पना है जबकि प्राथमिक स्तर पर शैक्षिक सम्प्राप्ति एवं बुद्धि-लब्धि के बीच सम्बन्ध है, यह सह-सम्बन्ध की परिकल्पना है। अन्तर (या सहसम्बन्ध) की प्रकृति के अनुरूप इन दोनों प्रकार की परिकल्पनाओं को द्वितीय वर्गीकरण में तीन प्रकार से बाँटा जा सकता है। दिशापरक परिकल्पना अन्तर (या सहसम्बन्ध) की दिशा को भी सूचित करती है। दूसरे शब्दों में ऐसी परिकल्पना किसी एक समूह को दूसरे से श्रेष्ठ या निम्न बताती है। सह-सम्बन्ध की स्थिति में दिशापरक परिकल्पना सह-सम्बन्ध के धनात्मक या ऋणात्मक होने की घोषणा करती है। इसके विपरीत दिशाविहीन परिकल्पना में अन्तर की दिशा (या सह-सम्बन्ध के प्रकार) का जिक्र नहीं होता है। इन दोनों से भिन्न शून्य परिकल्पना की स्थिति में अन्तर (या सह-सम्बन्ध) के शून्य होने की अभिज्ञप्ति की जाती है। इन सभी प्रकार की परिकल्पनाओं के उदाहरण आगे सारणी 3.02 में दिये जा रहे हैं।

अनुसंधान परिकल्पनाओं का तीसरा वर्गीकरण सकारात्मक परिकल्पना बनाम नकारात्मक परिकल्पना का होता है। सकारात्मक परिकल्पना का कथन किसी अन्तर या प्रभाव या सह-सम्बन्ध के होने को स्वीकारते हुए उसे सकारात्मक (+ve) रूप में प्रस्तुत करता है। जैसे कक्षा दस के छात्रों का सामान्य ज्ञान कक्षा नौ के छात्रों से अधिक है, या अभ्यास से अधिगम में बढ़ोत्तरी होती है,या कार्य सन्तोष व कार्य सहभागिता में धनात्मक सम्बन्ध है। इसके विपरीत नकारात्मक परिकल्पना का कथन किसी अन्तर या प्रभाव या सह-सम्बन्ध के होने को नकारते हुए उसे नकारात्मक (– ve) रूप में प्रस्तुत करता है। जैसे कक्षा दस के छात्रों का सामान्य ज्ञान कक्षा नौ के छात्रों से अधिक नहीं है, या अभ्यास से अधिगम में बढ़ोत्तरी नहीं होती है, या कार्य सन्तोष तथा कार्य सहभागिता में सम्बन्ध नहीं है। इन दोनों ही प्रकार की परिकल्पनाओं की एक बड़ी कमी अनुसंधानकर्त्ता के द्वारा इनमें स्वनिहित हो जाने या तादात्म्य बन जाने की सम्भावना का है। कभी-कभी अनुसंधानकर्त्ता अपनी परिकल्पना को सत्य सिद्ध करने में लग जाता है एवं विपरीत परिणाम आने पर उसे लगता है कि परिणाम आशानुकूल नहीं आये हैं। ऐसा करना या सोचना पूरी तरह से अनुचित है।

परिकल्पनाओं का चतुर्थ वर्गीकरण वस्तुतः अनुसंधान की विषय-वस्तु के कालखण्ड से सम्बन्धित होता है। प्रयोगात्मक अनुसंधान में पूर्व-कथित परिकल्पना बनाई जाती है जो ऐसा करने पर क्या होगा? के प्रश्न का उत्तर देती है। ऐतिहासिक अनुसंधानों में उत्तर-कथित परिकल्पना का निर्माण होता है जो पूर्व में क्या था? के प्रश्न का उत्तर होती है। वर्णनात्मक अनुसंधानों में वर्णित परिकल्पना तैयार की जाती है जो वर्तमान में क्या है? के प्रश्न का समाधान प्रस्तुत करती है। जैसे प्रशिक्षण का विक्रयकर्त्ताओं पर सार्थक प्रभाव होगा, एक पूर्व कथित परिकल्पना है, वैदिक काल में समावर्तन उपदेश की प्रथा थी, एक उत्तरकथित परिकल्पना है; एवं वरिष्ठ व कनिष्ठ प्रशासकों के मानसिक दबाव में अन्तर है, एक वर्णित परिकल्पना है। स्पष्ट है कि समस्या की प्रकृति व अध्ययन के स्वरूप के अनुरूप इनमें से किसी एक प्रकार की परिकल्पना बनाई जा सकती है।

सारणी – 3.02

अनुसंधान परिकल्पनाओं के कुछ उदाहरण

(Some Examples of Research Hypothesis)

	अन्तर की परिकल्पना (Hypothesis of Difference)	सह-सम्बन्ध की परिकल्पना (Hypothesis of Relationship)
दिशा परक परिकल्पना (Directional Hypothesis)	1. अधिक बुद्धि वाले छात्रों की शैक्षिक निष्पत्ति का स्तर कम बुद्धि वाले छात्रों की शैक्षिक निष्पत्ति से अधिक होता है।	1. छात्रों की बुद्धिलब्धि तथा शैक्षिक निष्पत्ति के मध्य धनात्मक सह-सम्बन्ध है।
	2. अधिक कार्य क्षमता वाले कर्मियों में कम कार्य क्षमता वाले कर्मियों की तुलना में कार्य दबाव कम होता है।	2. कार्य दबाव तथा कार्य क्षमता में ऋणात्मक सहसम्बन्ध है।
	3. सन्तुष्ट कर्मचारी असन्तुष्ट कर्मचारियों की अपेक्षा अधिक समायोजित होते हैं।	3. समायोजन तथा कार्य सन्तोष में धनात्मक सहसम्बन्ध होता है।
	4. अभिप्रेरित व्यक्ति की तुलना में कम अभिप्रेरित व्यक्तियों में कम दुश्चिन्ता पाई जाती है।	4. अभिप्रेरणा तथा दुश्चिन्ता में नकारात्मक सहसम्बन्ध होता है।
दिशा विहीन परिकल्पना (Non-Directional Hypothesis)	1. शिक्षित तथा अशिक्षित व्यक्तियों के सामाजिक कौशल में अन्तर होता है।	1. सामाजिक कौशल तथा शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में सहसम्बन्ध है।
	2. सतत् एवं असतत अधिगम शैली के छात्रों की शैक्षिक आकांक्षा में अन्तर होता है।	2. शैक्षिक आकांक्षा तथा अधिगम शैली में सहसम्बन्ध है।
	3. छात्र एवं छात्राओं की व्यावसायिक आकांक्षाओं में अन्तर होता है।	3. परीक्षण दुष्चिन्ता तथा मानसिक सहनशीलता के बीच सहसम्बन्ध है।
	4. वरिष्ठ एवं कनिष्ठ नागरिकों की सामाजिक परिपक्वता में अन्तर पाया जाता है।	4. वैज्ञानिक अभिरुचि तथा सृजनशीलता में सहसम्बन्ध होता है।
शून्य परिकल्पना (Null Hypothesis)	1. छात्र एवं छात्राओं की शैक्षिक निष्पत्ति में अन्तर नहीं होता है।	1. वैयक्तिक परिपक्वता तथा सामाजिक अलगाव के बीच सहसम्बन्ध नहीं है।
	2. कला एवं विज्ञान वर्ग के स्नातक छात्रों के शैक्षिक अलगाव में अन्तर नहीं है।	2. गणित व हिन्दी प्राप्तांकों के बीच सहसम्बन्ध नहीं है।
	3. ग्रामीण तथा शहरी छात्रों की अधिगम शैली में अन्तर नहीं है।	3. बालिग महिलाओं की आयु तथा भार के बीच सम्बन्ध नहीं होता है।
	4. महिला तथा पुरुष प्रशासकों की प्रशासनिक प्रभावशीलता में अन्तर नहीं है।	4. पारिवारिक माहौल का समायोजन से सम्बन्ध नहीं होता है।

सकती है जिन्हें तर्कपूर्ण निष्कर्षों को प्राप्त करने के लिए सत्य स्वीकार कर लिया जाता है। जैसे किसी लिखित परीक्षण का प्रयोग करते समय अभिधारणा होती है कि सभी उत्तरदाता को इसमें प्रयुक्त शब्दावली तथा भाषा का सम्यक ज्ञान है। किसी बड़े समूह में बुद्धिलब्धि के वितरण को सामान्य प्रायिकता वक्र (NPC) के अनुरूप मानना या रैण्डम त्रुटियों को परस्पर असम्बन्धित मानना भी अभिधारणाएँ हैं। इनको पूर्ण सत्य सिद्ध करने की कोई जरूरत नहीं होती है परन्तु इन्हें मानने के उपरान्त ही अध्येता के लिए आगे का कार्य सम्भव हो पाता है।

परिकल्पना से तात्पर्य सम्भावित स्पष्टीकरण से होता है। यह किसी प्रश्न, समस्या या जिज्ञासा का अन्तरिम उत्तर होता है। इसका क्षेत्र सीमित होने तथा इसके अनुमान पर आधारित होने के कारण इसकी विश्वसनीयता तथा वैज्ञानिकता प्रायः संदिग्ध रहती है। इसे सिद्धान्त की प्रारम्भिक अवस्था भी कहा जा सकता है। पुष्टि होने पर परिकल्पना सिद्धान्त में बदल जाती है एवं एक सर्वमान्य सत्य के रूप में ज्ञान भण्डार में वृद्धि करती है। जैसे यह कहना कि 'गुटका खाने वाले व्यक्तियों को कैंसर होने की सम्भावना अधिक होती है, एक परिकल्पना है जिसकी आनुभाविक ढंग से पुष्टि की जा सकती है।

सिद्धान्त किसी समस्या, प्रश्न या जिज्ञासा का लगभग अन्तिम उत्तर होता है। इनका क्षेत्र व्यापक होता है तथा ये आनुभाविक अध्ययनों पर आधारित होते हैं। यही कारण है कि इनकी विश्वसनीयता तथा वैज्ञानिकता सुप्रमाणित होती है। सिद्धान्त प्रायः गलत साबित नहीं होते हैं परन्तु इनमें कालान्तर में ऐसा परिमार्जन सम्यक हो सकता है जो प्रकरण के अधिक स्पष्टीकरण में सहायक हो सकता है। हर्जबर्ग द्वारा प्रतिपादित कृत्य सन्तोष (Job Satisfaction) का द्वि-कारक सिद्धान्त (Two Factor Theory) एक ऐसा ही सिद्धान्त है जो कृत्य सन्तोष को प्रभावित करने वाले कारकों का स्पष्टीकरण प्रदान करता है। इसी प्रकार से न्यूटन का गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त (Gravitational Theory) तथा आइन्स्टीन का सापेक्षिकतावाद (Theory of Relativity) क्रमशः गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव तथा समय की सापेक्षकता को स्पष्ट करते हैं।

अनुसंधान परिकल्पना की सार्थकता
(Significance of Research Hypothesis)

अनुसंधान कार्य के दौरान परिकल्पना निर्माण के सम्बन्ध में दो प्रश्न प्रायः सामने आते हैं। प्रथम, अनुसंधान कार्य में परिकल्पना की आवश्यकता क्या पड़ती है? एवं द्वितीय, क्या प्रत्येक प्रकार के अनुसंधान कार्यों में परिकल्पना का निर्माण करना अनिवार्य होता है? यह दोनों प्रश्न अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तथा गहन निहितार्थ वाले हैं जिनके सम्बन्ध में सम्यक ढंग से विचार करना उचित व आवश्यक ही है। वस्तुतः किसी भी अनुसंधानकार्य को वैज्ञानिक विधि से सम्पादित करने में परिकल्पना की एक आवश्यक, महत्त्वपूर्ण व अपरिहार्य भूमिका रहती है। परिकल्पना के अभाव में अनुसंधानकर्त्ता के लिए अपने कार्य की व्यवस्थित रूपरेखा बनाना एवं किसी तार्किक निष्कर्ष पर पहुँचना अत्यन्त कठिन होता है। दार्शनिक, ऐतिहासिक या विवेचनात्मक प्रकार के अनेक अनुसंधानों में कभी-कभी परिकल्पनाओं का कोई उल्लेख नहीं रहता है। यहाँ तक कि अनुसंधान विधियों पर लिखी कुछ पुस्तकों में भी परिकल्पना बनाये बिना अनुसंधान कार्य सम्भव होने की चर्चा पाई जाती है। इन दोनों कारणों से कुछ नवागुन्तक अनुसंधानकर्त्ता समझते हैं कि अनुसंधान कार्यों में परिकल्पना का निर्माण करना जरूरी नहीं होता है। परन्तु इस प्रकार की धारणा बनाना नितान्त भ्रामक, अनुचित तथा अतार्किक है। आधुनिक युग में परिकल्पना के अभाव में वैज्ञानिक विधि के द्वारा किसी व्यवस्थित तथा औपचारिक अनुसंधान कार्य करने की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। वस्तुतः ज्ञान सृजन की आधुनिक विधि वैज्ञानिक तर्क पर आधारित होती है जिसमें परिकल्पना की पुष्टि से ही नवीन ज्ञान का सृजन व उसकी स्वीकार्यता सम्भव होती है। अनुसंधान कार्य एक औपचारिक व व्यवस्थित क्रिया-कलाप है जिसमें वैज्ञानिक विधि के सभी पाँच सोपानों का अनुसरण करना अनिवार्य है। जेम्स वाट ने भाप इंजन की, आर्कमिडीज ने सापेक्षिक

घनत्व सिद्धान्त का व न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त का प्रतिपादन अपने-अपने अनुभवों के आधार पर बनाई परिकल्पनाओं के आनुभाविक परीक्षणों द्वारा ही किया था। प्रसिद्ध वैज्ञानिक स्टीफन होपकिन्स के नेतृत्व में ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति से सम्बन्धित महाविस्फोट सिद्धान्त (Big Bang Theory) की पुष्टि हेतु एल.एच.सी. (LHC) मशीन के द्वारा चल रहे विभिन्न प्रयोग भी परिकल्पनाओं के ऊपर आधारित हैं।

जहाँ तक दार्शनिक, ऐतिहासिक व विवेचनात्मक प्रकृति के अनुसंधान कार्यों का प्रश्न है, तो इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि इस प्रकार के अनुसंधान कार्यों में भी अनुसंधानकर्त्ता अपनी समस्या के निरूपण के उपरान्त किसी-न-किसी परिकल्पना के अनुरूप कार्य करता है। कभी-कभी परिकल्पना के परीक्षण के लिए मात्रात्मक तरीकों (Quantitative Measures) के उपलब्ध न होने के कारण गुणात्मक या प्रसांगिक (Textual) प्रकार के अनुसंधानों में परिकल्पना को स्पष्ट रूप में वर्णित करना व आनुभाविक ढंग से परीक्षण करना सम्भव नहीं होता है। ऐसी स्थिति में प्रायः अनुसंधानकर्त्ता परिकल्पना को अपनी कार्य योजना में अंकित न करके उसे मानसिक परिप्रेक्ष्य (Mental Perspective) के रूप में स्वीकार करता है। उदाहरण के लिए किसी ऐतिहासिक स्थल का उत्खनन करने सम्बन्धी अनुसंधान कार्य में अनुसंधानकर्त्ता पहले से यह परिकल्पित नहीं कर पाता है कि उत्खनन में उसे क्या-क्या सामग्री प्राप्त होगी। परन्तु उत्खनन स्थल का चयन करते समय निश्चित रूप से उसका अनुमान होता है कि यह एक प्राचीन ऐतिहासिक स्थल है तथा इस स्थल के उत्खनन से कुछ पुरातत्वीय सामग्री अवश्य मिलेगी। अनुसंधानकर्त्ता का यह अनुमान ही उसकी अनुसंधान परिकल्पना है जो उसे भावी अध्ययन के लिए निर्देशित करती है। कभी-कभी इस प्रकार की परिकल्पना को अन्तर्निहित (Implied) मानते हुए अनुसंधानकर्त्ता इसका स्पष्ट ढंग से न तो उल्लेख करता है और न ही परीक्षण करता है। इसी प्रकार से किसी महान व्यक्ति के दार्शनिक चिन्तन पर कार्य प्रारम्भ करते समय अनुसंधानकर्त्ता किसी क्षेत्र विशेष में उस महान व्यक्ति के चिन्तन की प्रकृति का अनुमान भले ही न लगा सके, परन्तु यह अनुमान अवश्य लगा लेता है कि अमुक व्यक्ति का अमुक क्षेत्र में एक स्पष्ट दार्शनिक चिन्तन है। यही उसकी परिकल्पना है। निःसन्देह इस प्रकार की परिकल्पनाओं की जाँच मात्रात्मक प्रदत्तों के आधार पर किसी सांख्यिकीय परीक्षण के द्वारा प्रायिकता के किसी स्तर पर नहीं की जा सकती है। परन्तु उत्खनन से प्राप्त पुरातात्विक साक्ष्यों अथवा प्रासांगिक विश्लेषण (Textual Analysis) से प्राप्त दार्शनिक चिन्तन के तत्त्व, अनुसंधानकर्त्ता द्वारा परिकल्पित विचार की पुष्टि या खण्डन अवश्य कर सकते हैं।

अनुसंधान कार्यों में परिकल्पना निर्माण की आवश्यकता, सार्थकता तथा महत्त्व को निम्न बिन्दुओं के रूप में लिखा जा सकता है –

(i) परिकल्पना अनुसंधान कार्य को प्रारम्भ बिन्दु (Starting Point) प्रदान करती है।
(ii) परिकल्पना अनुसंधान कार्य को दिशा-निर्देशित (Directed) करती है।
(iii) परिकल्पना अनुसंधान कार्य के क्षेत्र को सीमित व व्यावहारिक (Practicable) बनाती है।
(iv) परिकल्पना अनुसंधान कार्य को विशिष्ट तथा केन्द्रित (Focused) बनाती है।
(v) परिकल्पना अनुसंधान कार्य को सार्थक तथा औचित्यपूर्ण (Justified) बनाती है।
(vi) परिकल्पना अनुसंधान कार्य के प्रारूप (Design) निर्धारण में उपयोगी होती है।
(vii) परिकल्पना अनुसंधान कार्य में विश्वसनीय प्रदत्त (Reliable Data) पाने में सहायक होती है।
(viii) परिकल्पना अनुसंधान कार्य को मितव्ययी (Economic) बनाती है।
(ix) परिकल्पना पूर्वकथन (Prediction) प्रस्तुत करने में सहायक होती है।
(x) परिकल्पना तथ्य स्थापना (Fact Establishment) में सहायक होती है।

अनुसंधान परिकल्पना के स्त्रोत
(Sources of Research Hypothesis)

निःसन्देह अनुसंधान कार्य में परिकल्पना का निर्माण करना एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तथा गम्भीर कार्य है। परन्तु अनुसंधान परिकल्पना का निर्माण न तो अनायास हो जाता है और न शून्य में उसका निर्माण किया जा सकता है। अनुसंधान परिकल्पना स्वयं में परिकल्पित होने के बावजूद भी व्यावहारिक रूप से वास्तविकता के धरातल पर आरूढ़ रहती है। परिकल्पना का निर्माण करते समय अनुसंधानकर्त्ता को उसे बनाने के पीछे निहित तर्काधार (Rationale) भी देना होता है। प्रायः अनुभव, अवलोकन तथा अगमन-निगमन तर्क के आधार पर परिकल्पना का निरूपण किया जाता है, परन्तु सृजनशील चिन्तन, सूझ तथा परिसंवाद आदि की भी परिकल्पना निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। यहाँ यह इंगित करना उचित ही होगा कि एक ही समस्या के लिए विभिन्न अनुसंधानकर्त्ता भिन्न-भिन्न परिकल्पनाएँ बना सकते हैं, परन्तु इनमें से प्रत्येक परिकल्पना किसी स्पष्ट तर्काधार पर निर्भर होनी चाहिए एवं प्रत्येक अनुसंधानकर्त्ता को अपनी-अपनी परिकल्पना की पुष्टि या सत्यापन करना होता है। अनुसंधानकर्त्ता द्वारा बनाई परिकल्पना वस्तुतः समस्या से सम्बन्धित उसके ज्ञान, अनुभव व सृजनात्मक चिन्तन पर निर्भर करती है। यही कारण है कि किसी अच्छी व तार्किक अनुसंधान परिकल्पना का निर्माण करने के लिए अनुसंधानकर्त्ता को अनेक स्त्रोतों से सामग्री का संकलन करना पड़ता है। परिकल्पना निर्माण के कुछ प्रमुख स्त्रोतों की चर्चा आगे की जा रही है।

(i) सम्बन्धित साहित्य (Related Literature) – परिकल्पना निर्माण का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण एवं उपयोग में आने वाला स्त्रोत सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन करके समस्या की पृष्ठभूमि का अधिकाधिक ज्ञान प्राप्त करना है। सम्बन्धित प्रकरण की सैद्धान्तिक स्थिति, पूर्व में किये गये अनुसंधान कार्य तथा अनियमितता व असमानताओं की सम्यक जानकारी परिकल्पना निर्माण में अत्यन्त सहायक होती है। अतः परिकल्पना बनाने से पूर्व अनुसंधानकर्त्ता को अनुसंधान समस्या से सम्बन्धित साहित्य का समीक्षात्मक अवलोकन अवश्य कर लेना चाहिए। इससे वह उस क्षेत्र के मूलभूत सम्प्रत्ययों, सैद्धान्तिक दृष्टिकोणों तथा अनुसंधान परिणामों से परिचित हो जाता है तथा तद्नुक्रम में अपने अनुभवों, अवलोकनों तथा अन्तर्दृष्टि के सापेक्ष विश्लेषित करके अपनी परिकल्पना बना सकता है। इस प्रकार से बनी परिकल्पना का तर्काधार सुदृढ़, निष्पक्ष एवं सत्याभासित होने के कारण उसे एक अच्छी परिकल्पना के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

(ii) पूर्व-अनुभव (Previous Experiences) – सम्बन्धित क्षेत्र विशेष में अनुसंधानकर्त्ता के पूर्व अनुभव भी उसके द्वारा बनाई जा रही अनुसंधान परिकल्पना का आधार हो सकते हैं। वस्तुतः किसी व्यक्ति के वैयक्तिक अनुभव जितने अधिक व्यापक, विस्तृत तथा गहन होते हैं उसे समस्या की खोज करने तथा परिकल्पना के निर्माण में उतनी ही अधिक सहजता होती है। अनुभव से व्यक्ति अपने परिवेश में हो रही अन्तःक्रियाओं प्रक्रियाओं तथा घटनाओं के स्वरूप को जान सकता है। इससे हुये इन्द्रियानुभव अनुसंधानकर्ता को अपनी परिकल्पना निर्माण करने में सार्थक योगदान कर सकते है।

(iii) अवलोकन (Observation) – अनुसंधानकर्त्ता के द्वारा दिन-प्रतिदिन अवलोकित की जा रही परिस्थितियाँ भी अनुसंधान परिकल्पना के निर्माण का एक अच्छा स्त्रोत होती है। अपनी बदलती हुई परिस्थितियों के सूक्ष्म अवलोकन से वह उनके सम्बन्ध में तटस्थ व वस्तुनिष्ठ जानकारी प्राप्त कर लेता है जो परिकल्पना निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं।

(iv) सादृश्यता (Analogy) – सादृश्य प्रकरणों के अवलोकन व जानकारी से अनुसंधानकर्त्ता को कभी-कभी ऐसे संकेत प्राप्त होते हैं जो परिकल्पना निर्माण में अत्यन्त सहायक सिद्ध होते हैं। दो सादृश्य परिस्थितियों में स्पष्टीकरण व व्याख्या की मूल प्रकृति को एक जैसा माना जा सकता है एवं एके के बारे

में सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक ज्ञान होने पर दूसरे के लिए उसी आधार पर परिकल्पनाएँ बनाई जा सकती है। सादृश्यता, परिस्थितियों, व्यक्तियों व चरों में से किसी में भी हो सकती है, एवं सावधानी से प्रयोग किये जाने पर परिकल्पना का आधार बन सकती है।

(v) सांस्कृतिक विरासत (Cultural Heritage) – परिकल्पना निर्माण का एक अन्य महत्वपूर्ण स्रोत सांस्कृतिक विरासत को माना जा सकता है। ऐतिहासिक सामाजिक व मनोवैज्ञानिक अनुसंधानों में इस स्रोत का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। प्रत्येक समाज की अपनी एक सांस्कृतिक विरासत होती है जो एक भिन्न सामाजिक दृष्टिकोण को जन्म देती है। समस्याओं के समाधान में सामाजिक दृष्टिकोण की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है जो परिकल्पना के निर्माण में सहायक सिद्ध होती है।

(vi) सूझ (Insight) – अनुसंधानकर्ता को अचानक मिली सूझ भी परिकल्पना निर्माण में सहायता कर सकती है। अनुसंधान समस्या से चिन्तित अनुसंधानकर्त्ता के समक्ष कभी-कभी सार्थक परिकल्पना अनायास ही उपस्थित हो जाती है। इसलिए अनुसंधानकर्त्ता को अपनी अनुसंधान समस्या से सम्बन्धित समस्त घटनाओं के प्रति सजग दृष्टिकोण रखना चाहिए एवं हो रहे परिवर्तनों को ध्यानपूर्वक देखना चाहिए। न्यूटन, आर्कमिडीज व वॉट के अनुसंधान कार्यों में परिकल्पना अचानक ही सूझी थी।

(vii) सृजनात्मक चिन्तन (Reflective Thinking) – सृजनात्मक चिन्तन भी परिकल्पना के निर्माण में महत्त्वपूर्ण, भूमिका अदा कर सकता है। विद्यमान ज्ञान से भली-भाँति परिचित तथा बहुमुखी प्रतिभा से युक्त अनुसंधानकर्त्ता लीक से अलग हटकर सोच सकता है। उसका यह परावर्तित चिन्तन उसके द्वारा अनुभूत समस्या के समाधान के सम्भावित विकल्प को प्रस्तुत कर सकता है। सृजनात्मक चिन्तन से परिकल्पनाओं की आकस्मिक उत्पत्ति के उदाहरण दुष्प्रायः नहीं है। पावलव ने अनुबन्धन के क्षेत्र में तथा फ्रॉयड ने मनोविश्लेषण के क्षेत्र में किये अपने अनुसंधान कार्यों में आकस्मिक ढंग से सृजनात्मक चिन्तन के आधार पर परिकल्पना बनाकर किया था।

(viii) परिसंवाद (Discussion) – अनुभवी व्यक्तियों से किये गये विचार-विमर्श भी परिकल्पना निर्माण के अच्छे स्रोत हो सकते हैं। जो व्यक्ति किसी क्षेत्र विशेष में कार्य कर चुके हैं या कार्य कर रहे हैं उनसे परिचर्या करने पर समस्या के अनेक अनछुए पहलूओं पर प्रकाश पड़ सकता है। ऐसे व्यक्ति समस्या के गूढ़ार्थों को समझते हुए समस्या के सम्बन्ध में अपने तार्किक विचार प्रस्तुत कर सकते हैं। उनके विचार परिकल्पना निर्माण में सहायक होते हैं।

(ix) पूर्व अनुसंधान (Previous Researches) – समस्या में सम्मिलित चरों के सम्बन्ध में पूर्व के अनुसंधानकर्त्ताओं ने क्या परिकल्पनायें बनाई थी एवं उनके परीक्षण से क्या परिणाम प्राप्त किये थे, परिकल्पना निर्माण में यह भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण जानकारी सिद्ध होती है। वस्तुतः किसी नई खोज का उपक्रम विद्यमान ज्ञान भण्डार के सातत्य में ही निहित होना चाहिए। अतः अनुसंधानकर्त्ता को अपने अध्ययन से सम्बन्धित विद्यमान अनुसंधान परिणामों के साथ-साथ उनमें प्रयुक्त अनुसंधान योजना व प्राप्त अनुभवों की भी सम्यक जानकारी होनी चाहिए।